प्रथम अध्याय

मम्मट व विश्वनाथ का व्यक्तित्व तथा कर्तृत्व

प्रथम अध्याय

क. आचार्य मम्मट का व्यक्तित्व व कर्तृत्व एक परिचय

ख. आचार्य विश्वनाथ का व्यक्तित्व व कर्तृत्व एक परिचय

मम्मट का काल तथा वंश

भोजराज के बाद मम्मटचार्य का काल आता है। अलङ्कारसाहित्य के निर्माताओं की अब तक की धारा में दण्डी, राजशेखर और भोजराज के अतिरिक्त और सभी आचार्य कश्मीर निवासी थे। इसी प्रकार ये मम्मटाचार्य भी कश्मीर निवासी हैं यह बात उनके नाम से ही प्रतीत होती है। परन्तु इनके जीवन वृत्तादि का और कुछ अधिक परिचय नहीं मिलता है। कश्मीरी पण्डितों की परम्परागत प्रसिद्धि के अनुसार मम्मट 'नैषधीयचरित' के रचयिता महाकवि श्रीहर्ष के मामा माने जाते हैं। किन्तु यह प्रवादमात्र जान पड़ता है, क्योंकि महाकवि श्री हर्ष स्वयं कश्मीरी नहीं थे। 'काव्यप्रकाश' की 'सुधासागर' टीका के निर्माता भीमसेन ने मम्मट के परिचय के रूप में पद्य लिखे हैं, उनसे यह प्रतीत होता है कि मम्मट कश्मीरदेशीय जैयट के पुत्र थे। उन्होंने वाराणसी में जाकर विद्याध्ययन किया था। पतञ्जलि-प्रणीत 'महाभाष्य' के टीकाकार कैयट तथा यजुर्वेद भाष्यकार उव्वट दोनों मम्मट के छोटे भाई थे। इस भाव का वर्णन भीमसेन ने अपने श्लोकों में किया है।[1] इस विवरण के अनुसार मम्मट का जन्म 'जैयटगेहिनी' के सुजठर से हुआ था। अर्थात् वे जैयट के पुत्र थे, और 'श्रीमान् कैयट ओव्वटौ ह्यवरजौ' कैयट और औव्वट उनके छोटे भाई थे, जिन्होंने 'भाष्याब्धिं निगमं-यथाक्रममनुव्याख्याय' महाभाष्य तथा वेदों पर व्याख्या लिखी थी। इस प्रकार मम्मट रूप में स्वयं सरस्वती देवी ने कश्मीर देश में पुरुष के रूप में अवतार लिया था और साहित्यशास्त्र पर सूत्रों का निर्माण, उसपर स्वयं काव्यप्रकाश वृत्ति की रचना की थी। यह विवरण सुधासागरकार भीमसेन ने मम्मटाचार्य के विषय में अपने ग्रंथ में प्रस्तुत किया है। किन्तु इसमें जो कैयट तथा औव्वट या उव्वट को मम्मट का अनुज कहा है वह ठीक प्रतीत नहीं होता है, क्योंकि उव्वटकृत वाजसनेय सहिंता भाष्य में उनका परिचय भिन्न मिलता है[2], उव्वट द्वारा स्वयं प्रदत्त इस विवरण के अनुसार उव्वट के पिता का नाम 'वज्रट' है, 'जैयट' नहीं, और

उनका वेदभाष्य भोजराज के शासनकाल में लिखा गया है। किन्तु मम्मट का समय भोजराज के समकाल नहीं अपितु उनके बाद पड़ता है। क्योंकि मम्मट ने स्वयं उल्लास में उदात्त अलङ्कार के उदा. रूप में जो पद्य दिया है उसमें अन्त में 'वह सब भोजराज के दान का फल है[3]' इस रूप में भोजराज के नाम का उल्लेख किया है। भोजराज का शासनकाल, जैसा कि इतिहास में 996 ई. से 1051 ई. पर्यन्त माना जाता है। मम्मट उनके उतरवर्ती जान पड़ते हैं। किन्तु यदि कथञ्चित् मम्मट को भोजराज का समकालीन भी मान लिया जाय तो भी उव्वट को उनका अनुज कहना कठिन है। हां कैयट को उनका अनुज माना जा सकता है, क्योंकि कैयट ने भी 'कैयटोजैयटात्मजः' के अनुसार अपने को जैयट का पुत्र कहा है। किन्तु उव्वट तो वज्रट के पुत्र हैं। इसलिए उव्वट को मम्मट का अनुज बतलाने वाला भीमसेन का लेख सन्दिग्ध जान पड़ता है। इसके अतिरिक्त 'शिवपुरीं गत्वा प्रपठयादरात्' लिखकर मम्मट को विद्याध्ययन के लिए कश्मीर से 'शिवपुरी' वाराणसी भेजा है। यह बात भी कुछ युक्तिसङ्गत प्रतीत नहीं होती। कश्मीर तो स्वयं विद्या का केन्द्र था। साहित्य शास्त्र के अब तक जितने आचार्य हुए थे उनमें दण्डी, राजशेखर और भोजराज को छोड़कर सभी आचार्य कश्मीर में ही उत्पन्न हुए थे। जो तीन आचार्य कश्मीर से बाहर के थे, काशी के साथ उनका भी कोई संबंध नहीं था। साहित्य-शास्त्र की दृष्टि से काशी का कोई विशेष महत्व उस समय नहीं था। इसलिए मम्मट के लिए कश्मीर को छोड़कर काशी आने का कोई विशेष प्रयोजन या आकर्षण नहीं प्रतीत होता है। इन सब कारणों से भीमसेन का मम्मट विषयक उपर्युक्त परिचय अप्रामाणिक मालूम होता है। भीमसेन का यह लेख मम्मट के लगभग 600 वर्ष बाद सन 1723 में लिखा गया है। इसलिए उसमें अधिकतर कल्पना से काम लिया गया है[4]।

युग्मकर्तृत्व

'काव्यप्रकाश' के कर्त्ता के रूप में साधारणतः मम्मट ही प्रसिद्ध हैं। किन्तु वस्तुतः वे अकेले ही इस ग्रंथ के निर्माता नहीं हैं। इसमें मम्मट के अतिरिक्त कश्मीर के दूसरे विद्वान्, 'अल्लट' का भी सहयोग है। वह सहयोग कितने अंश में है इस विषय में कुछ मतभेद पाया जाता है, किन्तु 'काव्यप्रकाश' केवल अकेले मम्मट की रचना नहीं है, उसकी रचना में 'अल्लट' का भी हाथ है इस विषय में मतभेद नहीं है। अधिकांश टीकाकार इस बात में एकमत हैं।

काव्यप्रकाश के अंत में एक श्लोक मिलता है[5]। इस श्लोक का अर्थ है-इस प्रकार 'भामह, वामन, उद्भट, आनन्दवर्धन आदि प्राचीन विद्वानों का रस संप्रदाय, ध्वनिसंप्रदाय, रीतिसंप्रदाय, अलङ्कारसंप्रदाय आदि रूप में भिन्न-भिन्न प्रतीत होने वाला यह काव्य निरुपण मार्ग भी जो इस काव्यप्रकाश ग्रंथ में समन्वित पद्धति से निरुपित होकर अभिन्न-सा प्रतीत हो रहा है वह कोई विचित्र बात नहीं है, क्योंकि भली प्रकार से समन्वयात्मक भावना से की हुई रचना ही उसका कारण है।

इस उपसंहारात्मक श्लोक से दो बातें प्रतीत होती हैं। एक तो यह है कि काव्यप्रकाशकार के पूर्व साहित्यशास्त्र पर जिन अनेक आचार्यों ने ग्रंथों की रचना की तथा काव्य की आत्मा भिन्न-भिन्न बतायी है। काव्यप्रकाशकार ने अपने ग्रंथ में उन सब मतों का समन्वय करने का प्रयत्न किया है इसलिए उनकी इस समन्वयात्मक रचना शैली के कारण ध्वनि, रीति, रस, अलङ्कार आदि सभी विषयों का समावेश और विवेचन उनके इस ग्रंथ में पाया जाता है और उनमें किसी प्रकार का विरोध नहीं भासता इसी बात का सङ्केत ग्रंथकार ने इस श्लोक में किया है। दूसरी बात यह भी प्रतीत होती है कि यह काव्यप्रकाश ग्रंथ भी मम्मटाचार्य की कृति है। परन्तु वे इस ग्रंथ को परिकरालङ्कार तक ही लिख सके थे, उसके बाद उनका देहान्त हो जाने से या किसी अन्य कारण से अधूरे पड़े हुए ग्रंथ के शेष भाग की रचना अल्लटसूरि नामक किसी विद्वान ने की है। इस प्रकार दो भिन्न-भिन्न विद्वानों द्वारा लिखा जाने पर भी रचनाशैली की अत्यन्त समानता के कारण यह सारा ग्रंथ एक ही व्यक्ति की रचना सा जान पड़ता है[6]। काव्यप्रकाश के सबसे पूर्ववर्ती टीकाकार माणिक्यचंद्र ने इस श्लोक की व्याख्या में लिखा है-

अथ चायं ग्रंथोऽन्येनारब्धोऽपरेण च समाप्ति इति द्विखण्डोऽपि सङ्घटनावशादखण्डायते'।

इसी प्रकार 'काव्यप्रकाश' की 'सङ्केत' टीका के निर्माता रुचक ने इसकी व्याख्या में लिखा है-

'एतेन महामतीनां प्रसरणहेतुरेष ग्रंथो ग्रंथकृतानेन कथमप्यसमाप्तत्वादपरेण च पूरितावशेषत्वात् द्विखण्डोऽपि'।

इन दोनों टीकाकारों ने इस बात की ओर संकेत तो किया है कि ग्रंथ का आरंभ अन्य

विद्वान के द्वारा अर्थात् मम्मटाचार्य के द्वारा किया गया, किन्तु किसी कारण से वे इसको समाप्त नहीं कर सके, तब इसकी समाप्ति दूसरे विद्वान के द्वारा की गयी। किन्तु दो निर्माताओं के द्वारा बनाये जाने पर भी यह ग्रंथ अखण्ड सा प्रतीत होता है। परंतु इन टीकाकारों ने न तो स्पष्ट रूप से इस बात का उल्लेख किया कि पूर्व ग्रंथकार ने कितना भाग लिखा और न इस बात का संकेत किया कि वह दूसरा विद्वान जिसने अपूर्ण 'काव्यप्रकाश' को पूर्णता प्रदान की, कौन था। इन दोनों बातों का उल्लेख स्पष्ट रूप से सबसे पहले 'काव्यप्रकाशनिदर्शना' नामक टीका के निर्माता राजानक आनंद ने 1685 में निम्न श्लोक दिया है[7]।

कृतः श्रीमम्मटाचार्यवर्यैः परिकरावधिः।

ग्रंथः सम्पूरित शेषं विधायाल्लटसूरिना॥

इस श्लोक से स्पष्ट है कि मम्मट ने परिकर अलङ्कार पर्यन्त तथा आगे अलट या अल्लट विद्वान ने काव्यप्रकाश को पूरा किया। अमरूकशतक के टीकाकार अर्जुनदेव संपूर्ण ग्रंथ को मम्मट व अल्लटसूरि दोनों विद्वानों द्वारा मानते हैं। उनका मानना है कि काव्यप्रकाश का संपूर्ण भाग मम्मट व अल्लट दोनों विद्वानों की सम्मिलित रचना है।[8]

कारिका-सूत्र-वृत्ति-उदा. कर्तृत्व

काव्यप्रकाश को जिस प्रकार दो आचार्यों की कृत्ति माना जाने में मतभेद है वहीं कारिका सूत्र,व वृत्ति भाग भी अलग-अलग आचार्यों द्वारा रचित हैं इसमें पर्याप्त मतभेद हैं। साहित्यकौमुदीकार विद्याभूषण तथा काव्यप्रकाश की 'आदर्श' टीका के निर्माता महेश्वर ने कारिका भाग के निर्माता भरतमुनि को तथा वृत्ति भाग के निर्माता मम्मटाचार्य को माना है। वहीं दूसरे लोग कारिकाभाग तथा वृत्तिभाग दोनों का निर्माता एक ही मम्मटाचार्य को मानते हैं। तथा उदा. तो सभी प्रसिद्ध काव्यों से लिये गये हैं इसलिए उनके कर्तृत्व के विषय में कोई विवाद नहीं है।

इस विवाद को काव्यप्रकाश के हिन्दी व्याख्याकार आचार्य विश्वेश्वर ने तीन भेदवादी मतों से निराकरण किया है[9]।

1. काव्यप्रकाश की मूल कारिकाओं के आंरभ में तो मङ्गलाचरण किया गया है। किन्तु वृत्तिभाग के आरंभ में कोई मङ्गलाचरण नहीं किया गया है। यदि मम्मट केवल वृत्तिभाग के ही

निर्माता होते तो वे अपने वृत्तिग्रंथ के आरंभ में मङ्गलाचरण अवश्य करते। मूल के आरंभ में जो मङ्गलाचरण है उसी को वृत्ति भाग का मङ्गलाचरण मानने का अभिप्राय यह है कि ये दोनों भाग मम्मट आचार्य के ही बनाये हुए हैं।

2. जहाँ-जहाँ मम्मटाचार्य ने भरतमुनि की कारिकाओं या सूत्रों को उद्धृत किया है वहां 'तदुक्तं भरतेन' लिखकर उस विशेष सूत्र या कारिका के साथ भरतमुनि का नाम जोड़कर ही उद्धृत किया है। यदि सारी ही कारिकाएँ भरतमुनि की बनायी हुई होती तो फिर दो-तीन विशेष स्थलों पर ही 'तदुक्तं भरतेन' का प्रयोग क्यों किया जाता। इस प्रयोग से सिद्ध होता है कि केवल वे कारिकाएँ या सूत्र जिनके साथ 'तदुक्तं भरतेन' लिखा गया है, भरतमुनि के बनाये हुए हैं, शेष सब मम्मटाचार्य के स्वयं बनाये हुए सूत्र या कारिकाएँ हैं।

3. काव्यप्रकाश के कारिका तथा वृत्तिभाग दोनों ही मम्मटाचार्य के ही बनाये हुए हैं इस बात को सिद्ध करने के लिए तीसरी युक्ति यह है कि रूपक के प्रसङ्ग में-

'साङ्गमेतन्निरङ्गन्तु शुद्धं, माला तु पूर्ववत्' लिखकर पूर्वकथित 'मालोपमा' के समान 'मालारूपक' भी हो सकता है यह बात ग्रंथकार ने 'माला तु पूर्ववत' इस कारिका भाग से कही है। यदि कारिका भाग भरतमुनि का बनाया हुआ है तो यहाँ कारिका भाग में 'माला तु पूर्ववत' लिखकर जिस मालोपमा का संकेत किया गया है। वह मालोपमा भी भरतमुनि विरचित कारिका में ही निर्दिष्ट होना चाहिये किन्तु काव्यप्रकाश में मालोपमा का जो उल्लेख किया गया है वह कारिका भाग में नहीं वृत्तिभाग में किया गया है[10]। पहिले वृत्तिभाग में जिस मालोपमा का उल्लेख किया गया है उसी को यहां कारिका भाग में 'माला तु पूर्ववत्[11]' लिखकर निर्दिष्ट किया गया है। इससे यह बात स्पष्ट होती है कि काव्यप्रकाश के कारिकाभाग और वृत्तिभाग दोनों के निर्माता स्वयं मम्मटाचार्य हैं। इसलिए जो लोग कारिकाभाग को भरतमुनि कृत मानते हैं और मम्मटाचार्य को केवल वृत्तिभाग का ही निर्माता मानते हैं उनका मत युक्ति सङ्गत नहीं है।

मम्मट के टीकाकार

मम्मट का 'काव्यप्रकाश' संस्कृत-साहित्य के विद्वानों का अत्यन्त प्रेमभाजन रहा है। इसलिए इसके ऊपर टीका लिखने वाले विद्वानों की संख्या बहुत बड़ी है।

'भगवद्गीता' एक अत्यन्त प्रसिद्ध व लोकप्रिय धार्मिक ग्रंथ है। इसलिए भारतीय साहित्य में सबसे अधिक टीकाएँ भगवद्गीता के ऊपर लिखी गयी हैं। भगवद्गीता के बाद जिस ग्रंथ पर सबसे अधिक टीकाएँ लिखी गयी वह ग्रंथ मम्मटाचार्य का 'काव्यप्रकाश' है काव्यप्रकाश पर अब तक लगभग 75 टीकाएं संस्कृत में लिखी जा चुकी है तीन हिन्दी में तथा अंग्रेजी भाषा में भी उसका अनुवाद हो चुका है। इतनी अधिक टीकाओं का होना जहाँ एक और ग्रंथ की लोकप्रियता का परिचायक है वहाँ उसकी क्लिष्टता और दुरुहता भी द्योतक है।

काव्यप्रकाश की टीकाओं में सबसे प्राचीन टीका 1. माणिक्य चद्रकृत 'सङ्केत' टीका है। रचनाकाल सं 1216, सन 1160 ई.। 2. सरस्वतीतीर्थकृत 'बालचितानुरिञ्जनी' टीका: रचनाकाल सं. 1398, सन 1242, 3. जयन्तभट्टकृत 'दीपिका' टीका: रचनाकाल सं 1350, सन 1293 4. सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श' टीका। इसका दूसरा नाम संकेत भी है। 5. विश्वनाथ कृत 'दर्पण' टीका। 6. श्रीवत्सलाञ्छनकृत 'सारबोधिनी' टीका। 7. आनन्दकनिर्मित 'निदर्शना' टीका। 8. परमानन्द भट्टाचार्यकृत 'विस्तारिका' टीका। 9. महेश्वरकृत 'आदर्श' टीका। 10. कमलाकर भट्टनिर्मित 'विस्तृता' टीका। 11. नरसिंहकृत 'नरसिंहमनीषा' टीका। 12. भीमसेनकृत 'सुधासागर' टीका। 13. महेशचन्द्रविरचित 'तात्पर्यविवृति' टीका। 14. गोविन्दनिर्मित 'प्रदीपच्छाया' व्याख्या, 15. नागेशभट्टकृत 'लघ्वी' टीका। 16. तथा नागेशभट्टकृत 'वृहति' टीका। 17. बेद्यनाथकृत प्रदीप की 'उद्योत' नामक टीका। 18. वैद्यनाथ निर्मित 'प्रभा' टीका। 19. वैद्यनाथ द्वारा निर्मित 'उदाहरणचन्द्रिका' टीका। 20. राघव-विनिर्मित 'अवचूरि' टीका। 21. श्रीधरकृत टीका, 22. चण्डीदास कृत टीका, 23. देवनाथकृत टीका, 24. भास्करकृत 'साहित्यदीपिका' टीका। 25. सुबुद्धिमिश्रिकृत टीका, 26. पद्मनाभकृत टीका, 27. मिथिलेश के मंत्री अच्युत कृत टीका। 28. अच्युतपुत्र रत्नपाणि द्वारा निर्मित टीका। 29. भट्टाचार्य कृत 'काव्यदर्पण' टीका, 30. भट्टाचार्य के पुत्र रविकृत 'मधुमती' टीका। 31. 'तत्वबोधिनी' टीका के निर्माता नाम का पता नहीं चलता है। 32. इसी प्रकार 'कौमुदी' टीका के निर्माता का नाम विदित नहीं। 33. 'आलोक' टीका। 34. रुचककृत 'सङ्केत' टीका। 35. जयरामकृत 'प्रकाशतिलक' टीका। 36. 'यशोधरकृत' टीका। 37. विद्यासागरनिर्मित टीका। 38. मुरारिमिश्रकृत टीका। 39. मणिसारकृतटीका। 40. पक्षधर

कृत टीका। 41. सूरिकृत 'रहस्यप्रकाश' टीका। 42. रामनाथ कृत 'रहस्यप्रकाश ' टीका। 43. जगदीश कृत टीका, 44. गदाधरकृत टीका। 45. भास्करविनिर्मित 'रहस्यनिबन्ध' टीका, 46. रामकृष्णनिर्मित 'काव्यप्रकाश भावार्थ' टीका। 47. वाचस्पतिमिश्र-विरचित टीका। 48. झलकीकरवामनाचार्यकृत 'बालबोधिनी' टीका। इन 48 टीकाओं में सबसे प्राचीन माणिक्यचन्द्रकृत टीका सन 1160 ई. में लिखी गयी थी और सबसे नवीन टीका 'बालबोधिनी' सन 1747 ई. में लिखी गई थी। लगभग 500 वर्षों में काव्यप्रकाश पर 50 के लगभग टीकाएं लिखी जा चुकी हैं। बालबोधिनी के पश्चात 250 वर्षों में भी कुछ टीकाएँ लिखी गई हें। हिन्दी की 'काव्यप्रकाश-दीपिका' तीसरी टीका है इन टीकाओं का वर्णन भी 'काव्यप्रकाश दीपिका' से लिया गया है[12]।

मम्मट का मूल्याङ्कन

वाग्देवतावतार और उनके ग्रंथ 'काव्यप्रकाश' ने अलङ्कार शास्त्र के क्षेत्र में बड़ा ही गौरव तथा आदर प्राप्त किया है। उस गौरव का कारण ग्रंथ की अपनी विशेषताएं हैं। काव्यप्रकाश की सबसे बड़ी विशेषता, जिसके कारण उसको इतना अधिक गौरव प्राप्त हुआ और उसका इतना अधिक प्रचार हो सका, उसकी सूत्रशैली और विषय-बाहुल्य है। मम्मट ने 'काव्यप्रकाश' में संक्षेप में काव्यशास्त्र से संबंध रखने वाले सारे विषयों का प्रतिपादन बड़े सुंदर रूप में कर दिया है। भरतमुनि से लेकर भोजराज तक लगभग 1200 वर्षों में अलङ्कारशास्त्र के विषय में जिस विशाल साहित्य का निर्माण हुआ, उस संपूर्ण विशाल साहित्य का मम्मट ने मंथन कर उसका सारभूत जो 'नवनीत' प्राप्त किया वह 'काव्यप्रकाश' है। अलङ्कार की दृष्टि से भरत के नाट्यशास्त्र का नवनीत है रससिद्धान्त। भरतमुनि का रससूत्र और उस पर गत 1200 वर्षों में जो कुछ ऊहापोह हुआ है उस सबका सार 'काव्यप्रकाश' में सुंदर रूप में उपस्थित है। भामह का 'शब्दार्थौसहितौकाव्यम्' वाला काव्यलक्षण और अधिक निर्दुष्ट और अधिक सगुण, और अधिक अलङ्कृत और परिमार्जित होकर 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावलङ्कृति पुनः क्वापि' के रूप में 'काव्यप्रकाश' में मौजूद है। गत 1200 वर्षों में किये गये काव्यलक्षणों का सार मम्मट ने अपने इस काव्यलक्षण के भीतर समविष्ट कर दिया है। भामह और दण्डी ने शब्दशक्तियों का विवेचन किया है, न रस और न ध्वनि का। इसलिए वे आज के अलङ्कार शास्त्र की आवश्यकताओं की

पूर्ति नहीं करते और विषय प्रतिपादन की दृष्टि से अपूर्ण हैं। मम्मट ने भामह और दण्डी की इस कमी को समझा और 'काव्यप्रकाश' में इन विषयों का समावेश करके उस कमी को दूर करने का यत्न किया। उद्भट तो 'अलङ्कार सारसंग्रह' में ही रम गये हैं। गिने-चुने 41 अलङ्कारों के निरूपण के अतिरिक्त उनके पास काव्यशास्त्र का और कोई तत्त्व नहीं है। वामन रीति पर रीझ रहे हैं।

उन्होंने यद्यपि गुण, दोष और अलङ्कारों का भी वर्णन किया है, किन्तु काव्य के आत्मभूत तत्व रस की नितान्त उपेक्षा कर दी है और रीति को असाधारण गौरव प्रदान कर दिया है। वे साहित्यिक तत्त्वों का यथार्थ मूल्याङ्कन नहीं कर सके हैं। मम्मट ने रीति, गुण, दोष और अलङ्कार सबका यथार्थ मूल्याङ्कन किया है और सबको अपनी योग्यता के अनुरूप स्थान दिया है। यह उनकी बड़ी विशेषता है। वामन के बाद रुद्रट आते हैं, पर वे भी काव्यलक्षण, शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार के विवेचन में लगे हुए हैं। दश प्रकार के रस और नायक-नायिका भेद का वर्णन इन्होंने अवश्य किया है किन्तु उसके बाद भी साहित्यशास्त्र के अनेक अङ्ग छूट जाते हैं, शब्दशक्ति, ध्वनि आदि के विवेचन के बिना साहित्यिक ग्रंथ पूर्ण नहीं कहा जा सकता। रुद्रट के बाद आनन्दवर्धन आते हैं। आनन्दवर्धन सचमुच ही आनन्दवर्धन हैं। उन्होंने ध्वनि तत्व का ऐसा विशद और प्राञ्जल विवेचन उपस्थित किया है कि सहृदयों का हृदय परिपूर्ण हो उठता है। पर अकेली मिठाई से ही तो काम नहीं चलता। भगवान ने मधुर, अम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त षड्रस बनाये हैं। उन सबकी विविधता आस्वादविशेष को उत्पन्न करती है। आनन्दधर्वन में वह विविधता कहाँ है? उनका तो सब कुछ ध्वनि पर केन्द्रित हो रहा है। इसलिए वे भी साहित्यशास्त्र का समग्र चित्र अपने 'ध्वन्यालोक' में प्रस्तुत नहीं कर सके हैं। काव्यप्रकाशकार ने तो ध्वन्यालोक का सारा तत्त्वाशं बड़े सुंदर रूप में अपने ग्रंथ में उपस्थित कर लिया है। या यों कहिये कि मम्मट ने आनन्दवर्धन को पुनः प्राणदान किया है अन्यथा ध्वनिविरोधी भट्टनायक और महिमभट्ट ने मिलकर उनके ध्वनि सिद्धांत को कुचल ही डाला था। यह तो मम्मट का ही सामर्थ्य था कि इस उग्र सङ्घर्ष के बीच से वे ध्वनिसिद्धांत को बचाकर निकाल लाये हैं और अब वह सिद्धांत 'ध्वन्यालोक' से भी अधिक सुंदर रूप में और अधिक पुष्ट आधार पर 'काव्यप्रकाश'

में उपस्थित है। इसलिए मम्मटाचार्य को 'ध्वनिप्रस्थापनपरमार्चाय' कहा जाता है।

आनन्दवर्धन के बाद अभिनवगुप्त आते हैं। वे बड़े उत्कृष्ट विद्वान और प्रौढ़ लेखक थे, 'ध्वन्यालोकलोचन' और 'अभिनवभारती' दोनों साहित्य शास्त्र के लिए बड़ी देन हैं। परन्तु ये दोनों मिलकर भी साहित्य को पूर्ण नहीं कर रही है। काव्य आवश्यक अङ्ग-दोष और अलङ्कारों का विवेचन उनमें नहीं है। इसलिए वे अलङ्कारशास्त्र की दृष्टि से अपूर्ण और एकदेशी ही कहे जा सकते हैं। 'काव्यप्रकाश' ने उनकी इस अपूर्णता को पूर्ण किया है। 'लोचन' में अभिनवगुप्त ने ध्वनिसिद्धांत का उद्धार करने का यत्न किया है और 'अभिनवभारती' में नाट्यशास्त्र का। अलङ्कारशास्त्र की दृष्टि से उनका जो सारभूत तत्त्व है वह सब काव्यप्रकाश में उपस्थित है। इसलिए 'काव्यप्रकाश' इनकी अपेक्षा अधिक परिपूर्ण है और साहित्यिक आवश्यकता को अधिक सुंदरता के साथ शांत करने वाला है। इनके बाद राजशेखर आते हैं। यह तो बस 'मुरारेस्तृतीय: पन्था:' हैं।

काव्यमीमांसा' साहित्यशास्त्र का विवेचन करने वाली होने पर भी अब तक की सारी विचारधारा से बिल्कुल भिन्न है। इसलिए उपयोगी होने पर भी वह अलङ्कारशास्त्र विषयक जिज्ञासा की निवृत्ति में प्राय: असमर्थ है। अगले मुकुलभट्ट हैं। इनका 'अभिधावृत्तिमातृका' ग्रंथ केवल शब्दशक्ति से संबंध रखता है। अलङ्कारशास्त्र के अन्य अङ्गों से उसका कोई संबंध नहीं है। काव्यप्रकाशकार मम्मट ने उसकी उपेक्षा नहीं की है। साहित्यशास्त्र के एक आवश्यक भाग की पूर्ति उसके द्वारा होती है इसलिए उसका भी सारांश उन्होंने बड़े सुंदर रूप में अपने ग्रंथ में उपस्थित किया है। कुन्तक, क्षेमेन्द्र और भोजराज के सिद्धांतों का भी यथार्थ मूल्याङ्कन कर उनका समुचित रूप में 'काव्यप्रकाश' में समावेश किया गया है और ध्वनिविरोधी महिमभट्ट को तो खूब मजा चखाया है। उनकी ध्वनि विरोधी युक्तियों की ऐसी छीछालेदार की है कि अब वह बिचारा सिकुड़-सिकुड़कर अपने 'व्यक्तिविवेक' के भीतर ही समा गया है, उसके बाहर उसका कहीं कोई आदर नहीं है। जिस ध्वनिसिद्धांत को मिटा डालने का व्यक्तिविवेककार ने सङ्कल्प किया था, मम्मट की कृपा से वह अब पहले की अपेक्षा भी अधिक सुंदर तथा सुदृढ़ सिद्धांत के रूप में उपस्थित है।

आचार्य मम्मट की प्रतिभा, उसकी विशेषता और साहित्यशास्त्र के प्रति की गयी उनकी

सेवा का मूल्याङ्कन एक सहस्त्र वर्ष से भी अधिक लंबे काल में फैले हुए साहित्यशास्त्र के सिंहावलोकन के बिना नहीं किया जा सकता है। इसलिए शोधकर्ता ने बहुत संक्षेप में विगत एक सहस्त्र वर्षो की साहित्यिक प्रवृत्तियों का विश्लेषणकर यह दिखलाने का यत्न किया है कि काव्यप्रकाश ने इन एक सहस्त्र वर्षों में साहित्योद्यान में खिले हुए समस्त पुष्पों का मधुसञ्चय करके अपने इस 'काव्यप्रकाश' ग्रंथ का निर्माण किया है। यह उनकी सबसे बड़ी विशेषता है जिसके कारण उनको और उनके ग्रंथ को इतना अधिक आदर प्राप्त हुआ है। काव्यप्रकाश में अपने पूर्ववर्ती सारे अलङ्कारशास्त्रियों के गुणों सारी उत्तम बातों का एक साथ संग्रह कर दिया गया है और उनमें जो त्रुटियों या न्यूनताएँ थी उनको दूर कर एक सर्वाङ्गपूर्ण साहित्यग्रंथ उपस्थित करने का प्रयत्न मम्मट ने किया है। इसलिए काव्यप्रकाश इतना सारगर्भित, महत्वपूर्ण एवं उपादेय ग्रंथ बना गया है कि उस एक ही ग्रंथ का अध्ययन कर लेने से साहित्यशास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए 'काव्यप्रकाश' वस्तुत: एक महती रचना है।

कृत्तित्व-काव्यप्रकाश एक परिचय

मम्मट की एक ही कृत्ति काव्यप्रकाश मानी जाती है। काव्यप्रकाश में दश उल्लास है। उनमें प्रतिपाद्य विषय या सञ्चित मधु को इस प्रकार सजाकर रखा गया है कि बस देखते ही बनता है।

प्रथम उल्लास-

मम्मट प्रथम उल्लास में मङ्गलाचारण करके काव्य के प्रयोजन[13], काव्य के हतु[14], काव्य का लक्षण[15], काव्य के भेद[16] का निरुपण करते हैं। सारा काव्यप्रकाश 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुन: क्वापि' इस एक सूत्र के ऊपर घूम रहा है। प्रथम उल्लास का नाम 'काव्यप्रयोजन-कारण-स्वरूपनिर्णय' है जिसमें इन तीनों का ही विश्लेषण करके मम्मट ने वृत्ति व उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है।

द्वितीय उल्लास

द्वितीय उल्लास का नाम 'शब्दार्थ-स्वरूपनिर्णय' है जिसमें शब्द के तीन भेद, अर्थ के तीन भेद, अर्थ का चतुर्थ भेद तात्पर्यार्थ, अभिहितान्वयवाद, अन्विताभिधानवाद, सङ्केतग्रह के उपाय,

अभिधालक्षण, लक्षणानिरुपण, षड्विधलक्षणा, अभिधा मूला व्यञ्जना, शाब्दी व्यञ्जना में अर्थ का सहयोग इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों का निरुपण किया है। लक्षण में आये 'शब्दार्थों' का विवेचन है इसलिए 'शब्दार्थ स्वरूप निर्णय' नामक उल्लास कहा गया है।

तृतीय उल्लास

तृतीय उल्लास में आर्थी व्यञ्जना को स्पष्ट किया है अत: इसका नाम भी अर्थव्यञ्जकता निर्णय है।

चतुर्थ उल्लास

प्रथम उल्लास में काव्य के भेदों का वर्णन सामान्य रूप से किया था। उनके स्पष्टीकरण के लिए कुछ विशेष वर्णन की आवश्यकता थी। अत: चतुर्थ उल्लास में काव्य के प्रथम भेद ध्वनि काव्य का वर्णन किया गया है। अत: यह 'ध्वनि निर्णय उल्लास' कहलाता है। इसमें रस निरुपण में भरतमुनि का रससूत्र तथा उसके व्याख्यकारों तथा रसों का भेद-प्रभेदों सहित वर्णन है।

पञ्चम उल्लास

पञ्चम उल्लास में काव्य के द्वितीय भेद गुणीभूतव्यङ्ग्य के आठा भेदों का , तथा व्यञ्जना की अपरिहार्यता, व अनिवार्यता को सिद्ध किया गया है। इसका नाम 'ध्वनि गुणीभूतव्यङ्ग्यसङ्कीर्ण-भेदनिर्णय' कहा गया है।

षष्ट उल्लास

षष्ट उल्लास में काव्य के तृतीय भेद चित्र काव्य को स्पष्ट किया गया है। इसको 'शब्दार्थ चित्र-निरुपण' कहा गया है।

सप्तम उल्लास

सप्तम उल्लास में दोषों का निरुपण है। श्रुतिकटु आदि पदगत 16 दोष, 23 अर्थदोष, व रस दोषों को बताया है। अत: इसको 'दोषपूर्ण' उल्लास कहा है।

अष्टम उल्लास

अष्टम उल्लास में गुणों का उसके साथ ही रीति तथा वृत्तियों का भी वर्णन किया है। इसमें गुणों व अलङ्कारों में भेद दिखाया गया है। अत: यह उल्लास 'गुणालङ्कारभेद-निर्णय' कहा गया

है। यहाँ मम्मट के काव्यलक्षण 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि' के अनलंकृती पुनः क्वापि को निर्दिष्ट करते हुए अलङ्कार की परिभाषा करते हैं। उपकर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्।

हारादिवदलङ्कारास्तेऽनुप्रासोपमादयः[17] ॥

नवम उल्लास

अष्टम उल्लास गुणों तथा अलङ्कार की परिभाषा देकर नवम उल्लास में शब्दालङ्कारों का निरुपण करते हैं। क्रमशः 1. वक्रोक्ति, 2. अनुप्रास, 3. यमक, 4. श्लेष, 5. चित्र, 6. पुनरुक्तवदाभास इन छः शब्दालङ्कारों का निरुपण करते हैं। यह 'शब्दालङ्कार-निर्णय' नामक उल्लास है।

दशम उल्लास

दशम उल्लास में 61 अर्थालङ्कारों का वर्णन है। 1. उपमा, 2. सादृश्यमूलक अन्वयालङ्कार, 3. सादृश्यमूलक उपमेयोपमा, 4. सादृश्यमूलक उत्प्रेक्षा, 5. सादृश्यमूलक सन्देह, 6. रुपक, 7. अपह्नुति, 8. 'अर्थ' श्लेषालङ्कार, 9. समासोक्ति, 10. निदर्शना, 11. अप्रस्तुतप्रशंसा, 12. अतिशयोक्ति, 13. प्रतिवस्तूपमा, 14. दृष्टान्त, 15 दीपक, 16. तुल्ययोगिता, 17. व्यतिरेक, 18. आक्षेप, 19. विभावना, 20. विशेषोक्ति, 21. यथासंख्य, 22. अर्थान्तरन्यास, 23. विरोध, 24. स्वाभावोक्ति, 25. व्याजस्तुति, 26. सहोक्ति, 27. विनोक्ति, 28., परिवृत्ति, 29. भाविक, 30. काव्यलिङ्ग, 31. पर्यायोक्ति, 32. उदात्त, 33. समुच्चय, 34. पर्याय, 35. अनुमान, 36. परिकर, 37. व्याजोक्ति, 38. परिसंख्या, 39. कारणमाला, 40. अन्योऽन्य, 41. उतर, 42. सूक्ष्म, 43. सार, 44. असङ्गति, 45. समाधि, 46. सम, 47. विषम, 48. अधिक, 49. प्रत्यनीक, 50. मीलित, 51. एकावली, 52. स्मरण, 53. भ्रान्तिमान, 54. प्रतीप, 55. सामान्य, 56. विशेष, 57. तद्गुण, 58. अतद्गुण, 59. व्याघात, 60. संसृष्टि, 61. सङ्कर अलङ्कार।

इस प्रकार मम्मट ने नौवें उल्लास में शब्दालङ्कार तथा उभयालङ्कार का और दशम उल्लास में अर्थालङ्कारों का वर्णन किया है। इस प्रकार दश उल्लासों में ग्रंथकार ने काव्यशास्त्र से सम्बद्ध सारे विषय को बड़ी सुंदरता के साथ सजा दिया है यह काव्यप्रकाश की एक बड़ी विशेषता है जो उसको अन्य सब साहित्यिक ग्रंथों की अपेक्षा उपादेय बनाती है।

'ख' विश्वनाथ कविराज का व्यक्तित्व व कर्तृत्व

विश्वनाथ कविराज का समयनिर्णय-

विश्वनाथ कविराजः का समयनिर्णय वस्तुतः निःसन्दिग्ध है। विश्वनाथ कवराज को 13वीं 14वीं शताब्दी का कवि और आलङ्कारिक माना गया है। एक सूक्ति है जिसको विश्वनाथ कविराज ने 'अस्फुट' व्यङ्ग्यरूप गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्य के स्वरूप निरुपणार्थ उद्धृत किया है-

सन्धौ सर्वस्वहरणं विग्रहे प्राणनिग्रहः।

अल्लावदीननृपतौ न संधिर्न विग्रहः[18] *॥*

अल्लाउद्दीन को भारत में मुस्लिम साम्राज्य का आदि संस्थापक माना जाता है। इतिहासानुसार इसका शासन-काल 1286-1316 ई. है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि विश्वनाथ कविराज का स्थितिकाल चौदहवीं शती के पूर्वार्ध के बाद का है।

विश्वनाथ कविराज ने 'नैषधकार महाकवि श्रीहर्ष जिनका समय 1167-1174 माना जाता है।' इसके प्रतिवस्तूपमा अलङ्कार में उदा. रूप में उनके श्लोक को दिया है[19]। अतः इससे भी विश्वनाथ का समय निश्चित होता है।

विश्वनाथ कविराज का वंशगौरव और व्यक्तित्व

संस्कृत साहित्य में दो विश्वनाथ प्रसिद्ध है एक है न्याय सिद्धांत मुक्तावली के लेखक विश्वनाथ, जो नैयायिक हैं और दूसरे हैं। विश्वनाथ कविराज, जिन्होंने साहित्यदर्पण की रचना की है। दर्पणकार ने अपने और अपने कुल के संबन्ध में स्वयं बहुत कुछ परिचय दे रखा है। उन्होंने ऐसे घर में जन्म लिया जो कुल विद्या का धनी और कवि जगत में उच्च स्थान प्राप्त किये हुए था। विश्वनाथ कविराज के पूर्वज उत्कल के 'कविपंडित' होते आये हैं। इनके प्रपितामह का नाम कविपंडित प्रवर चन्द्रशेखर नारायण था। इनके प्रपितामह साहित्यशास्त्र के पराम्परागत विद्वान् और अलङ्कार शास्त्र के ग्रंथप्रणेता रह चुके हैं। जैसा कि कविराज अपने ग्रंथ में ही कहते हैं-

'चमत्कारश्चितविस्ताररूपो विस्मयापरपर्यायः।

तत्प्राणत्वं चास्मद्वृद्धप्रपितामहसहृदयगोष्ठ-

-गरिष्ठकविपंडितमुख्य-श्रीमन्नरायणपादैरुक्तम्[20] *।'*

विश्वनाथ कविराज ने अपने पिता का भी नामोल्लेख किया है- 'श्री चंद्रशेखर महाकविचंद्रसूनु श्रीविश्वनाथकविराजकृतं प्रबंधम्। साहित्यदर्पणममुं सुधियो विलोक्य साहित्यतत्त्वमखिलं सुखमेव वित्त[21]'॥

श्रीविश्वनाथ कविराज के पिता श्रीकवि पंडित चंद्रशेखर थे। श्री चंद्रशेखर कविपंडित की दो कृतियों-'पुष्पमाला' और 'भाषार्णव' का उल्लेख साहित्यदर्पण में मिलता है[22]।

इससे यह स्पष्ट होता है कि चंद्रशेखर कविपंडित शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी आदि भाषाओं के वैयाकरण थे। साहित्यदर्पण के परिच्छदों की समाप्ति में विश्वनाथ कविराज के नाम के साथ इन विशेषणों का उल्लेख मिलता है[23]।

1. नारायणचरनारविन्द्रमधुव्रत।
2. साहित्यार्णवकर्णधार।
3. ध्वनिप्रस्थापन परमाचार्य
4. कविसूक्तिरत्नाकर।
5. अष्टादश भाषावारविलासिनीभुजङ्ग।
6. महापात्र

इनमें 'अष्टादशभाषावारविलासिनी भुजंग' का विरुद 'प्रशंसास्पद' यह प्रमाणित करता है कि विश्वनाथ कविराज को संस्कृत के अतिरिक्त अन्य समस्त प्राकृत भाषाओं का अध्ययन एक पैतृक देन के रूप में मिला है।

विश्वनाथ कविराज ने अपने पिता श्री चंद्रशेखर कविपंडित की अन्य भी कतिपय सूक्तियाँ उद्धृत की है[24]।

इन सूक्तिओं को देखने से, इनके रचनाकार का एक रसिक और श्रृंगारी कवि होना अनायास सिद्ध हो जाता है। विश्वनाथ कविराज के पिता कलिङ्ग राज्य के एक प्रतिष्ठित पदाधिकारी रहें होंगे। विश्वनाथ कविराज भी अपने पिता के उतराधिकारी प्रतीत होते हैं। दोनों के नामों के साथ 'संधिविग्रहिक' और 'महापात्र' का विरुद जुड़ा मिलता है।

वैष्णव धर्म में विश्वनाथ कविराज की आस्था की सूचना साहित्यदर्पण के इस अन्तमङ्गल श्लोक से मिल जाती है-

'यावत् प्रसन्नेन्दुनिभानना श्रीर्नारायणस्याङ्कमलङ्करोति।

तावन्मनः सम्मदयन् कवीनामेषप्रबंधः प्रथितोऽस्तु लोके[25] *॥'*

साथ ही साथ 'राघवविलास' नामक कविराज रचित 'महाकाव्य' की यह सूक्ति अर्थात्-

विपिने क्व जटानिबधंन तव चेदं क्व मनोहरं वपुः।

अनयोर्घटना विधेः स्फुटं ननु खड्गेन शिरीषकर्तनम्[26] *॥*

इस श्लोक का साहित्यदर्पण में भी उल्लेख है, यह सिद्ध करती है कि विश्वनाथ कविराज वैष्णव थे।

साहित्यदर्पण का रचयिता सबसे पहले कवि हो सकता है और बाद में ही आलंकारिक। रसिकता विश्वनाथ कविराज के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता है। विश्वनाथ कविराज का साहित्य भी उनकी रसिकता से विरुद्ध नहीं पड़ता। विश्वनाथ कविराज को 'कविसूक्तिरत्नाकर' की जो पदवी मिली थी उससे भी यही स्पष्ट है कि विश्वनाथ कविराज अपने समय के उत्कल 'उढिसा' प्रांत के एक रसिकशिरोमणि हो चुके हैं। विश्वनाथ कविराज की एक सूक्ति है-

लताकुञ्जं गुञ्जन्मदवदलिपुञ्जं चपलयन्

समालिङ्गनङ्गं द्रुततरमनङ्गं प्रबलयन्।

मरुन्मन्दं मन्दं दलितमरविन्दं तरलयन्

रजोवृन्दं विन्दन् किरति मकरन्दं दिशिदिशि[27] *॥*

इस सूक्ति में 'मधुर रचना' है इस सूक्ति से ही यह निःसंदिग्धरूप से माना जा सकता है कि विश्वनाथ कविराज को 'वर्णों के संमोहक संगीत' का कितना प्रगाढ परिचय था और 'वर्णों की माधुरी' से कितना प्रेम था। विश्वनाथ कविराज का कवित्वमय व्यक्तित्व साहित्यदर्पण की विचारधाराओं पर भी प्रतिबिम्बित दिखायी देता है।

विश्वनाथ कविराज की साहित्यिक कृतियाँ

विश्वनाथ कविराज की आठ रचनाओं के विषय में सूचना प्राप्त होती है।

1. **साहित्यदर्पण**

विश्वनाथ कविराज का 'साहित्यदर्पण' तो अलङ्कार शास्त्र के एक प्रसिद्ध ग्रंथ के रूप में प्रसिद्ध ही है।

2. राघवविलास

संस्कृत भाषा में 'महाकाव्य' के रूप में रचा गया था साहित्यदर्पण में राघवविलास की 'बिपिने क्व जटानिबन्धनम्' आदि उद्धृत सूक्ति के देखते यह अनुमान असंभव नहीं प्रतीत होता कि विश्वनाथ कविराज कालिदास के 'कुमारसंभव' और भवभूति के 'उत्तररामचरित' के पूरे रसिक थे।

3. कुवलयाश्वचरित

विश्वनाथ कविराज ने प्राकृत भाषा में भी एक काव्य रचा था जिसका नाम 'कुवलयाश्वचरित' है जैसा कि साहित्यदर्पण के उदाहरण से स्पष्ट है-

अथ जडता-

अप्रतिपत्तिर्जडता स्यादिष्टनिष्टदर्शनश्रुतिभिः।

अनिमिष-नयननिरिक्षणतूष्णीं-भावादयस्तत्र[28] *॥*

इसके उदा. को स्पष्ट करते हुए कविराज कहते हैं-

यथा मम कुवलयाश्वचरिते प्राकृतकाव्ये-

'नवरिअ तं जुअजुअलं अमोण्णं णिहिदसजलमनरठ्ठिम्।'

आलेकरव ओपिअं विअ खनमेत्तं तत्थ संट्ठिअं मुअ सण्णम्॥

यह उदा. उन्होंने अपनी कृति कुवलयाश्रयचरित से ही दिया है। अतः यह उनकी ही रचना थी।

4. प्रभावतीपरिणय

विश्वनाथ कविराज की अन्य कृति एक नाटिका है जिसका नाम 'प्रभावतीपरिणय' है जैसा निम्न उद्धरण से स्पष्ट है-

प्रथमावतीर्णमदनविकारा यथा प्रभावतीपरिणये[29]-यह प्रभावतीपरिणय नाटिका विश्वनाथ कविराज की शृंङ्गार-रसिकता की ही एकदेन है।

5. चंद्रकला

विश्वनाथ कविराज की अन्य रचनाओं में एक चंद्रकला नाटिका है जिसका उन्होंने साहित्यदर्पण में इस प्रकार स्मरण किया है।-कान्तिरेखातिविस्तीर्णा दीप्तिरित्यभिधीयते[30]।

यथा मम चंद्रकलानाटिकायां चंद्रकलावर्णनम्।

तारुण्यस्य विलासः समधिकलावण्यसंपदो हासः।

धरणितलस्याभरणं युवजनमनसो वशीकरणम्॥

इस नाटिका से भी इसके रचयिता का नायिका-भेदविज्ञान और शृंगाररस-प्रेम स्पष्ट प्रतीत होता है।

6. प्रशस्तिरत्नावली

विश्वनाथ कविराज की अन्य एक रचना 'प्रशस्तिरत्नावली' है जिसमें 16 भाषाओं में संभवत कलिङ्गनरेश नरसिंह प्रथम और द्वितीय की प्रशस्तियाँ लिखी गयी हैं। इसका उल्लेख विश्वनाथ कविराज ने इन शब्दों में किया है-

करभकं तु भाषाभिर्विविधाभिर्विनिर्मितम्।

यथा मम-षोडशभाषामयी प्रशस्तिरत्नावली[31] *॥*

7. नरसिंहविजय

कलिङ्ग नरेश नरसिंह संभवतः नरसिंह द्वितीय के विजयगौरवगान के रूप में विश्वनाथ कविराज ने नरसिंहविजय नामक काव्य की रचना की है जिसका निर्देश विश्वनाथ कविराज के पुत्र अनन्तदास ने साहित्यदर्पण की 'लोचन' नामक व्याख्या में इन शब्दों में किया है।[32]-

-'यथा मम तातपादानां विजयनरसिंहे।'

8. काव्यप्रकाशदर्पण

साहित्यदर्पण के निर्माण के बाद 'काव्यप्रकाशदर्पण' नामक काव्यप्रकाश की व्याख्या भी विश्वनाथ कविराज की एक और कृति है।

इन आठ कृतियों में 'साहित्यदर्पण' और 'काव्यप्रकाशदर्पण' के अतिरिक्त अन्य अप्राप्य हैं, विश्वनाथ कविराज की साहित्य-साधना का संकेत स्पष्ट रूप से मिल जाता है।

साहित्यदर्पण की विशेषता

साहित्यदर्पण अलङ्कारशास्त्र का प्रस्थान ग्रंथ नहीं और न इसमें ध्वन्यालोक, काव्यप्रकाश ओर रसगंगाधर की प्रवाहपूर्ण, वैज्ञानिक और विचारात्मक शैली ही अपनायी गई है। साहित्यदर्पण की एक मौलिक विशेषता है और वह उसकी एक महत्त्वाकांक्षा है जिसका लक्ष्य काव्य साहित्य

संबंधी समस्त विषयों का एकत्र प्रतिपादन है। इस महत्त्वाकांक्षा में कविराज विश्वनाथ को पर्याप्त सफलता भी मिली है। वैसे इतना निश्चित है कि काव्य साहित्य के समस्त विषय एक अलङ्कारग्रंथ में नहीं आ सकते। साहित्यदर्पण कोई मौलिक अलङ्कार ग्रंथ नहीं क्योंकि आदि से अंत तक इसमें प्राचीन आलङ्कारिकों की ही मान्यताओं का प्रकाशन है और प्राचीन अलङ्कार ग्रंथों के ही उदाहरणों के उदाहरण भरे पड़े हैं। किन्तु तब भी सरस और सरल भाषा के द्वारा विषयप्रतिपादन की शैली जैसी साहित्यदर्पण की है वैसी दूसरे अलङ्कारग्रंथों की नहीं। साहित्यदर्पण बड़ा लोकप्रिय ग्रंथ है 'काव्यप्रकाश' की दुरुहता से लोग घबरा जाते हैं किन्तु साहित्यदर्पण अपनी सुबोधता से साधारण काव्यप्रेमी को भी आकृष्ट कर लेता है। यदि साहित्य दर्पण न रचा गया होता तो भारत के पूर्वी प्रांतों के संस्कृत-काव्य-नाट्य प्रेमी नाट्यशास्त्र के विषयों से अपरिचित ही रह जाते। मौलिक न होने पर भी, संग्रह-प्रधान होने पर भी, 'साहित्यदर्पण' साधारण सहृदय सामाजिक के लिए वस्तुत: 'साहित्यदर्पण' है जिसमें साहित्यशास्त्र के तत्त्व प्रतिबिम्बित हैं। साहित्यदर्पण से साहित्यशास्त्र के विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के बाद, इन विषयों के मौलिक ग्रंथों का अनुशीलन लाभप्रद माना जाया करता है।

परवर्ती अलङ्कारशास्त्र पर साहित्यदर्पण का प्रभाव

साहित्यदर्पण ने अपने परवर्ती अलङ्कारशास्त्र को पर्याप्त रूप से प्रभावित किया है। साहित्यदर्पण का सबसे बड़ा प्रभाव 'रसगङ्गाधर' की रचना के रूप में देखा जा सकता है। वैसे इसमें कोई संदेह नहीं कि रसगङ्गाधर की आलोचनात्मक प्रतिभा साहित्यदर्पण में नहीं थी किन्तु यह भी नि:सन्दिग्ध है कि साहित्यदर्पण की रचना ने ही पंडितराज जगन्नाथ को अलङ्कारशास्त्र के पुनरालोचन में प्रेरित किया है पंडितराज जगन्नाथ ने 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' के काव्य लक्षण की समीक्षा [33] में ही 'रमनीयार्थप्रतिपादक: शब्द काव्यम्' का अपना काव्यलक्षण रचा है।

साहित्यदर्पण सामान्य परिचय

साहित्यदर्पण में दश परिच्छेद हैं जिसमें साहित्य शास्त्र के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश डाला गया है।

प्रथम परिच्छेद

विश्वनाथ प्रथम परिच्छेद में 'वाग्देवी की वन्दना' मङ्गलाचरण के रूप में करके अलङ्कार

शास्त्र का प्रयोजन, काव्य-प्रयोजन रूप में पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति, साहित्यदर्पण का अनुबंध चतुष्टय, पूर्वाचार्यों द्वारा किये गये काव्यलक्षणों का खंडन तथा अंत में स्वसम्मत काव्यस्वरूप 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' का प्रतिपादन किया गया है। इसी में काव्यात्मभूत 'रस' और गुण-अलङ्काररीति तत्त्व का परस्पर सम्बन्ध बताया है। प्रथम परिच्छेद का नाम 'काव्यस्वरूप-निरुपण' है।

द्वितीय परिच्छेद

द्वितीय परिच्छेद में 'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' काव्यलक्षण के 'वाक्यस्वरूप का निरुपण' है जिसमें योग्यता, आकाङ्क्षा, आसत्ति को समझाकर, महाकाव्य का स्वरूप, त्रिविध अर्थ का स्वरूप, अभिधाशक्ति निरुपण, सङ्केतग्रह के उपाय, लक्षणा शक्ति निरुपण, लक्षणा के 80 भेद, व्यञ्जनाशक्ति लक्षण, अभिधामूला व्यञ्जना, लक्षणामूला व्यञ्जना, आर्थी व्यञ्जना का निरुपण इत्यादि महत्वपूर्ण विषयों का विवेचन द्वितीय परिच्छेद में है।

तृतीय परिच्छेद

तृतीय परिच्छेद में रस का निरुपण है। रस का स्वरूप, विभाव, अनुभाव, सञ्चारीभाव, स्थायीभाव की रसरूप में अभिव्यक्ति, रस के भेद, नायक के भेदोपभेद, शृंङ्गाररस में उक्तचतुर्विध नायकों के अन्य चार प्रकार, नायक के सहायक, नायक के दूत, नायक के सात्विक गुण, नायिका निरुपण, नायिका के भेद, नायिकाओं के यौवनालङ्कार, व्यभिचारिभाव का लक्षण तथा उसके भेदों का निरुपण, रसों के शृंङ्गार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, बीभत्स, अद्भूत, शान्त और भयानक नौ रसों का निरुपण, भाव, रसाभास, भावाभास, भावशान्ति, भावोदय, भावसन्धि और भावशबलता का निरुपण किया गया है।

चतुर्थ परिच्छेद

चतुर्थ परिच्छेद में 'काव्य-प्रकार-निरुपण' है ध्वनि काव्य, ध्वनि के दो भेद 1. अविवक्षितवाच्य, 2. विवक्षितान्यपरवाच्य, अविवक्षितवाच्य ध्वनि के दो भेद 1. अर्थान्तरसक्रंमित वाच्य ध्वनि 2. अत्यन्ततिरस्कृत वाच्य ध्वनि, अन्य विवक्षितान्यपरवाच्यध्वनि के दो भेद, गुणीभूतव्यङ्ग्य द्वितीय काव्यभेद के आठ प्रकार, और काव्यप्रकाशसम्मत तृतीय काव्यभेद चित्र

काव्य का खंडन का इस परिच्छेद में वर्णन है।

पञ्चम परिच्छेद

पञ्चम परिच्छेद में व्यञ्जना वृत्ति का स्वरूप निरुपण है। व्यञ्जना शक्ति का प्रतिपादन किया गया है। वाच्यार्थ और व्यङ्ग्यार्थ के मौलिक भेदों में व्यञ्जना की मान्यता का बीज रूप जिसमें-बौद्ध, स्वरूप, इयता, निमित, प्रभाव, प्रतीति, काल, आश्रय, और विषय भेद का निरुपण किया गया है। तथा व्यञ्जनावृति की मान्यता अनिवार्य है यह सिद्ध किया गया है।

षष्ठ परिच्छेद

षष्ट परिच्छेद में 'दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य का विस्तार से वर्णन किया गया है। रूपक के भेद, उपरूपक, नाटकस्वरूप निरुपण, गर्भाङ्क क्या है, नान्दी का लक्षण, भारती वृत्ति के अङ्ग चार-प्ररोचना, वीथी, प्रहसन, आमुख: प्रस्तावना के पांच भेद, वस्तु: इतिवृत: आधिकारिक और प्रासांगिक, पताकास्थानक, अर्थोपक्षेपक, अर्थप्रकृति पञ्चक, कार्यावस्था पञ्चक, सन्धिपञ्चक, 64 सन्धि के अङ्ग, इस प्रकार दृश्यकाव्य का निरुपण करके, श्रव्यकाव्य के प्रकार, पद्यात्मक काव्य के भेद, महाकाव्य स्वरूप निर्णय, गद्यकाव्य के अवान्तर भेद, गद्यपद्यात्मक काव्यप्रबंध का निरुपण किया गया है। अत: षष्ट परिच्छेद में नाट्यसंबंधी महत्वपूर्ण विषयों का निरुपण हुआ है।

सप्तम परिच्छेद

सप्तम परिच्छेद में काव्य के दोषों का निरुपण किया गया है। 13 पददोष, 23 वाक्यगत दोष, 23 अर्थदोष, 14 रसदोष तथा अलङ्कारदोषों का भी निरुपण किया गया है।

अष्टम परिच्छेद

काव्य में गुण तत्त्व, स्वरूप और उपयोग, माधुर्य, ओज और प्रसाद गुणों का स्वरूप निरुपण, प्राचीन अलङ्कार शास्त्र के गुणों का इसी में अंतर्भाव किया गया है।

नवम परिच्छेद

काव्य में रीतितत्त्व: स्वरूप और उसका उपयोग, रीतिभेद-वैदर्भी, गौड़ी, पाञ्चाली तथा लाटी का सोदाहरण वर्णन किया गया है।

दशम परिच्छेद

विश्वनाथ कविराज ने दशम परिच्छेद में शब्दालाङ्कार और अर्थालङ्कार का वर्णन किया है। विश्वनाथ ने सात शब्दालङ्कारों का वर्णन किया है।

1. पुनरुक्तवदाभास, 2. अनुप्रास, 3. यमक, 4. वक्रोक्ति, 5. भाषायमक, 6. श्लेष, 7. चित्रालङ्कार।

सात शब्दालङ्कारों का वर्णन कर विश्वनाथ 75 अर्थालङ्कारों का वर्णन करते हैं। जो निम्न हैं- 1. उपमा, 2. अनन्वय, 3. उपमेयोपमा, 4. स्मरण, 5. रूपक, 6. परिणाम, 7. संदेह, 8. भ्रान्तिमान, 9. उल्लेख, 10. अपह्नुति, 11. निश्चय, 12. उत्प्रेक्षा, 13. अतिशयोक्ति, 14. तुल्यायोगिता, 15. दीपक, 16. प्रतिवस्तूपमा, 17. दृष्टान्त, 18. निदर्शना, 19. व्यतिरेक, 20. सहोक्ति, 21. विनोक्ति, 22. समासोक्ति, 23. परिकर, 24. श्लेष, 25. अप्रस्तुतप्रशंसा, 26. व्याजस्तुति, 27. पर्यायोक्ति, 28. अर्थान्तरन्यास, 29. काव्यलिङ्ग, 30. अनुमान, 31. हेतु, 32. अनुकूल, 33. आक्षेप, 34. विभावना, 35. विशेषोक्ति, 36. विरोध, 37. असङ्गति, 38. विषम, 39. सम, 40. विचित्र, 41. अधिकम्, 42. अन्योऽन्यम्, 43. विशेष, 44. व्याघातः, 45. कारणमाला, 46. मालादीपकम्, 47. एकावली, 48. सारः, 49. यथासख्यम्, 50. पर्याय, 51. परिवृत्ति, 52. परिसंख्या, 53. उत्तरम्, 54. अर्थापत्तिः, 55. विकल्प, 56. समुच्चय, 57. समाधि, 58. प्रत्यनीकम्, 59. प्रतीपम्, 60. मीलितम्, 61. सामान्यम्, 62. तद्गुण, 63. अतदगुण, 64. सूक्ष्मम्, 65. व्याजोक्ति, 66. स्वाभावोक्तिः, 67. भाविकम्, 68. उदातम्, 69. रसवत्, 70. प्रेय, 71. ऊर्जास्वि, 72. समाहित, 73. भावोदय, 74. भावसन्धि, 75. भावशबलता इस प्रकार 75. अर्थालङ्कारों का वर्णन कर कविराज अलङ्कार सम्मिश्रण 1. संसृष्टि और 2. सङ्कर दो अलङ्कारों का वर्णन भी दशम परिच्छेद में करते हैं।

1. शब्द ब्रह्म सनातनं न विदितं शास्त्रै: क्वचित केनचित्

क. तद्देवी हि सरस्वती स्वम्भूत, काश्मीर-देशे पुमान्द।
श्रीमज्जैयटगेहिनीसुजठराज्जन्माप्य युग्मानुज:
श्रीमन्मस्मटसञ्ज्ञया श्रिततनुं सारस्वतीं सूचयन्॥

ख. मर्यादां किल पालयन, शिवपुरीं गत्वा प्रपठयादरात्,
शास्त्रं सर्वजनोपकाररसिक: साहित्यसूत्रं व्यधात।
तत् वृत्तिं च विरच्य गूढमकरोत् काव्यप्रकाशं स्फुटं
वैदग्धेयैकनिदानमर्थिषु चतुर्वर्गप्रदं सेवनात्॥

ग. कस्तस्य स्तुतिमाचरेत् कविरहो को वा गुणान् वेदितुम्
शक्त: स्यात् किल मम्मटस्य भुवने वाग्देवतारुपिण:।
श्रीमान कैयट औव्वटो ह्यावरजौ यच्छात्रतामागतौ
भाष्याब्धिं निगमं यथाक्रममनुव्याख्याय सिद्धिं गतौ॥
का.प्र. सुधा.टी. भूमिका

2. आनन्दपुरवास्तव्य व्रजटाख्यस्य सूनुना।
मन्त्रभाष्यमिदं क्लृप्तं भोजे पृथ्वीं प्रशासति॥
वा.सं.भा.।

3. भोजनृपतेस्तत् त्यागलीलापितम्
का.प्र.द.उ.का.115, सू.175, उदा. 506,

4. का.प्र.हि.व्या. आ.वि.भू.पृ. 64,65

5. इत्येष मार्गो विदुषां विभिन्नोऽप्यभिन्नरूप: प्रतिभासते यत्।
न तद्विचित्रं यदमुत्र सम्यग्विनिर्मिता सङ्घटनैव हेतु:॥ का.प्र.
का.182, सू. 211 के का.प्र.

6. का.प्र.हि.व्या. आ. वि. पृ. 584

7. का.प्र.हि. व्या., आ.वि. भू.पृ. 65

8. वही- पृ. 66

9. वही-पृ. 71

10. का.प्र., द. उ., का. 94, सू. 143, का वृत्तिभाग

11. का.प्र., द. उ., सू. 143

12. का.प्र., हि.व्या.,आ.वि. भू. पृ. 71,72,73

13. काव्यं यशसेऽर्थ कृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्य परनिर्वृतेय कान्ता सम्मिततयोपदेशयुजे॥
का.प्र.,प्र.उ.का. 2

14. शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षनात्।
काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे॥
वही- का. 3

15. तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुन: क्वापि॥
वही-सू.1

16. क. इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः।
ख. आतदृशि गुनीभूतव्यङ्ग्यं व्यङ्ग्ये तु मध्यमम्।
ग. शब्दचित्रं वाच्यचित्रमव्यङ्गमयं त्ववरं स्मृतम्।
वही-का. 4,5, सू. 2,3,4,
17. वही-अ.उ. 87सू., 67 का.
18. सा.द., च.प., का. 14, गुणीभूतव्यङ्ग्य का 6 भेद अस्फुटव्यङ्ग्य का उदा.
19. धन्यासी वैदर्भी। गुणैरुदारैर्यया समाकृष्यत नैषधोऽपि।
इतः स्तुतिः का खलु चन्द्रिकाया यदब्धिमप्युत्तरलीकरोति।
वही द.प.,-49 का. वृत्तिभाग
20. वहीं- 3.3
21. वहीं- 10.100
22. क. द्वादशपदा 'नान्दी' यथा मम तातपादानां पुष्पमालायाम्।
23. सा.द.स.शाग्रिाम शास्त्री.व्या.भू. पृ. 62
24. वही
क. मध्यस्य प्रथिमानमेति-............................निर्लुण्ठनं सुश्रुवः॥ 3.58
ख. नौ चाटुश्रवणं कृतं-............................कण्ठे कथं नापितः॥ 3.82
ग. क्षेमं ते ननु-............................क्षेमं कुदो पुच्छसि॥ 3.213
घ चिन्ताभिः स्तिमितं मन-............................ दीनां दशामीदृशीम्॥ 3.207
25. सा.द.स.श.हि.व्या. भू.पृ. 63
26. सा.द. 3.225
शिरसि धृतसुरापगे स्मरारावरुण मुखेन्दुरुचिर्गिरीन्द्रपुत्री।
अथ चरणयुगान्ते स्वकान्ते स्मितसरसा भवतोऽस्तु भूतिहेतुः॥
वही-6.25
ख. भाषालक्षणानि मम तातपादानां भाषार्णवे।
वही- 6.169
27. वही- 8.3
28. वही - 3-148
29. दत्ते सालसमन्थरं भुवि पदं निर्याति नान्तःपुराद्
नोद्दामं हसति, क्षणात् कलयते हीयन्त्राणां कामपि।
किञ्चिद् भावगंभीर वक्रिमलवस्पृष्टं मनागभाषते,
सभ्रूभङ्गमुदीक्षते प्रियकथामुल्लापयन्तीं सखीम्॥
का.प्र.स.श.हि.व्या.भू. पृ. 64
30. का.प्र.- 3.96
31. वही- 7.337
32. का.प्र., स.श.हि. व्या. भू. पृ. 65

33. यत्रु 'रसवदेव काव्यम्' इति साहित्यदर्पणे निर्णितम् तत्र।
वस्त्वलङ्कारप्रधानानां काव्यानामकाव्यत्वापते:। न चेष्टापत्ति:,
महाकवि संप्रदायस्याकुलीभावप्रङ्गात्।
तथा च जलप्रवाहवेगनिपतनोत्पतनभ्रमनानि कविभिर्वर्णितानि कपिवालादिविलसितानि च।
न च तत्रापि यथाकथञ्चित् परम्परा रसस्पर्शोऽस्त्येवेति वाच्यम्।
ईदृशरसस्पर्शस्य 'गौ:चलति, मृगो धावति इत्यादावति प्रसक्तत्वेनाप्रयोजकत्वात्।
अर्थमात्रस्य विभावानुभावव्यभिचार्यन्यतमत्वादिति दिक्-रसगङ्गाधर-प्रथमआनन'